सत्य की पहली किरण
तीसरा प्रवचन

स्वतंत्रता की ओर
(सात प्रवचनों में से केवल तीसरा यहां है। अन्य सभी किन्हीं अन्य किताबों में संकलित हैं।)

एक रेगिस्तानी सराय में एक बड़ा काफिला आया था। यात्री थके हुए थे और ऊंट भी थके हुए थे। ऊंटों के मालिक ने खूंटियां गड़वायीं और ऊंटों के लिए रस्सियां बंधवायीं जिससे कि वे विश्राम कर सकें। लेकिन खूंटियां गाड़ते पता चला कि उनमें से एक की खूंटी और रस्सी खो गयी थी। उस ऊंट को खुला छोड़ना कठिन था, क्योंकि रात उसके भटक जाने की संभावना थी। उन्होंने सराय के मालिक से जाकर कहाः "यदि हमें एक खूंटी और रस्सी मिल जाये तो बड़ी कृपा होगी क्योंकि हमारी एक खूंटी और रस्सी खो गयी है।" सराय के मालिक ने कहाः "खूंटियां और रस्सियां तो हमारे पास नहीं हैं, लेकिन तुम ऐसा करो, खूंटी गाड़ दो और रस्सी बांध दो और ऊंट को कहो कि सो जाए। काफिले का मालिक तो बहुत हैरान हुआ। उसने कहा कि अगर खूंटी और रस्सी ही हमारे पास होती तो हम खुद ही न बांध देते? हम कौन सी खूंटी गाड़ दें और कौन सी रस्सी बांध दें।
सराय का मालिक इस पर हंसने लगा और बोलाः "यह जरूरी नहीं है कि ऊंट को असली खूंटी और असली रस्सी से ही बांधा जाए, नकली खूंटी से भी ऊंट बांधा जा सकता है। नकली खूंटी गाड़ दो और झूठी रस्सी ऊंट के गले पर बांध दो और उससे कहो कि वह सो जाए। और कोई रास्ता न था, विश्वास तो न आया कि यह बात हो सकेगी, फिर भी उन्होंने झूठी खूंटी गाड़ी। जो खूंटी नहीं थी उस पर उन्होंने चोटें कीं। ऊंट ने चोटें सुनी और समझा होगा कि खूंटी गाड़ी जा रही है। और वह रस्सी जो नहीं थी, उसे उन्होंने उसके गले पर बांधा। ऊंट ने समझा होगा कि रस्सी बांधी जा रही है। जैसा उन्होंने और ऊंटों को सो जाने को कहा था, ऐसा ही उसने भी कहा। वह ऊंट बैठ गया और सो गया।
सुबह जब काफिला उस सराय से रवाना होने लगा तो उन्होंने निन्यानबे ऊंटों की खूंटियां और रस्सियां खोलीं। लेकिन सौवें ऊंट की तो काई खूंटी ही नहीं, न कोई रस्सी थी। इसलिए न तो उसकी खूंटी उखाड़ी गयी और न रस्सी खोली। निन्यानबे ऊंट तो खड़े हो गए किन्तु सौवें ऊंट ने उठने से इनकार कर दिया। वे बहुत परेशान हुए। उन्होंने जाकर फिर उस सराय के बूढ़े मालिक से कहा कि तुमने कौन सा मंत्र किया है, हमारा ऊंट जमीन से बंधा रह गया, उठ नहीं रहा है? सारे ऊंट उठकर जाने को तैयार हो गए, लेकिन सौवां ऊंट जमीन पर वैसा ही बैठा है। उस सराय के बूढ़े मालिक ने कहाः "जाकर पहले खूंटी तो उखाड़ो रस्सी तो खोलो। वे बोलेः वहां न तो कोई खूंटी है और न कोई रस्सी! मालिक ने कहा, तुम्हारे लिए नहीं होगी लेकिन ऊंट के लिए है, जाओ खूंटी उखाड़ो और रस्सी खोला। जिस भांति झूठी खूंटी गड़ाई थी और झूठी रस्सी बांधी थी, उस भांति उन्हें निकालना भी तो होगा।
वे गए। उन्होंने उस खूंटी को उखाड़ा जो कि थी ही नहीं और उस रस्सी को खोला जिसका कि कोई अस्तित्व नहीं था। ऊंट उठकर खड़ा हो गया और बाकी साथियों के साथ चलने को तैयार हो गया। वे बहुत हैरान हुए और उन्होंने सराय के मालिक से पूछा कि क्या रहस्य है इस बात का? उसने कहाः न केवल ऊंट बल्कि आदमी भी ऐसी ही खूंटियों से बंधे होते हैं जिनका कि कोई अस्तित्व नहीं है, और ऐसी ही रस्सियां में परतंत्र होते हैं जिनकी कि कोई सत्ता नहीं है। ऊंटों का मुझे कोई अनुभव नहीं है, लेकिन मनुष्यों के अनुभव के आधार पर ही मैंने ऐसी सलाह तुम्हें दी थी!"
मैं भी उस सराय के बूढ़े मालिक से सहमत हूं। मनुष्यों को देखकर मैं भी
इस निष्कर्ष पर पहुंचा है। मनुष्य की परतंत्रता भी अत्यंत असत्य और काल्पनिक कारागृहों पर आधारित है। जिन जंजीरों की कोई भी सत्ता नहीं है, मनुष्य उनमें ही कैद है। और जो दीवारें स्व-निर्मित भ्रमों से ज्यादा नहीं हैं, मनुष्य उनके ही कारण मुक्त नहीं हो पाता है। आकाश की मुक्ति जिसका अधिकार हो सकती थी, वह अपने ही हाथों बनाये पिंजड़ों से पीड़ित होता

रहता है। और एक व्यक्ति नहीं वरन सारी मनुष्य जाति ही इस भांति की दासता से घिरी है। मनुष्य मात्र परतंत्र है। क्या यह सत्य आपका दिखाई नहीं पड़ता है? शायद नहीं। क्योंकि उनका दिखायी पड़ना ही दासता से मुक्त हो जाना है। गुलामी वास्तविक नहीं है कि उसे तोड़ना पड़े। वह है काल्पनिक। इसलिए उसका दिखायी पड़ जाना ही उसका टूट जाना है। इसलिए मैं मानसिक दासता की जंजीरों के दर्शन की यात्रा पर आज आपको ले चलना चाहता हूं। उस ऊंट को यदि ज्ञात हो जाता कि व झूठी खूंटी और रस्सी से बंधा है तो क्या वह उसी क्षण मुक्त नहीं था? क्या उसे फिर मुक्त होने के लिए कुछ और करना भी आवश्यक था? स्वतंत्रता सत्य है। स्वतंत्रता स्वभाव है। उसे पाना नहीं है। वह उपलब्ध ही है। बस जो स्वप्नों की परतंत्रता से मुक्त तो हो जाता है, वह पाता कि वह उसे सदा सदैव ही उपलब्ध ही रही है। वह नित्य उपलब्ध ही उपलब्धि है।
और परतंत्रता?
परतंत्रता अर्जित है। परतंत्रता कल्पित है। परतंत्रता अपने ही हाथों निर्मित है। वह असत्य आवरण है। वह झूठी खूंटी है। वह झूठी रस्सी है। इसलिए उसे जान लेना ही उसे पहचान लेना ही, उसे समझ लेना ही उसकी मृत्यु बन जाती है। वह तो एक स्वप्न की भांति है, जिसका कि जागते ही कोई अस्तित्व नहीं रह जाता है। लेकिन स्वप्न के भीतर ही स्वप्न बड़े सत्य मालूम होते हैं। ऐसी ही यह परतंत्रता भी बड़ी सत्य और वास्तविक प्रतीत होती है। क्या उस ऊंट के लिए उसकी खूंटी सत्य नहीं थी? क्या उसके लिए उसकी रस्सी वास्तविक नहीं थी? काश! उसने एक बार भी अपनी खूंटी रस्सी पर संदेह किया होता... विचार किया होता? लेकिन वह तो ऊंट ही था, उसे क्षमा भी किया जा सकता है। लेकिन मनुष्य के लिए हम क्या कहें? मनुष्य को क्षमा नहीं किया जा सकता है। मनुष्य भी तो विचार नहीं करता है। मनुष्य भी तो आंखें खोल कर नहीं देखता है। वह भी तो नहीं पूछता है कि यह कौन सी परतंत्रता है जो कि उसे सब ओर से सब भांति घेरे हुए है? वह भी नहीं खोजता है कि वे कौन से पत्थर हैं जो उसकी आत्मा को ऊंचाइयों पर नहीं उठने देते हैं? और कौन उन परतंत्रताओं को निर्मित करता है? कोई और या कि वह स्वयं? कौन उसे बांधता है, कोई और या कि वह स्वयं? और जिन बंधनों से वह बंधा है, वे वास्तविक भी हैं या कि नहीं? कहीं वह जीवन भर एक दुख-स्वप्न ही तो नहीं देखता रहता है?
एक जंगल में एक बहेलिए के साथ में एक बार थोड़ी देर रुका था। उससे मैंने यह बात पूछी थी कि जिन तोतों को तुम पकड़ते हो, उन्हें तुम पकड़ते हो या कि वे खुद ही तुम्हारे जाल में फंस जाते हैं? उस बहेलिए ने कहा थाः तुम मेरे साथ आओ और स्वयं देख लो। फिर तुम्हीं मुझे बता देना कि मैं उन्हें पकड़ता हूं या कि वे खुद ही मेरी पकड़ में आ जाते हैं।"उसने एक रस्सी बांध रखी थी दो वृक्षों के बीच में और उस रस्सी की ऐंठन में बीच-बीच में कुछ लकड़ियां फंसा रखी थीं। रस्सी के बीच कुछ अनाज के दाने डाल रखे थे। तोते उन लकड़ियों पर आकर बैठते और उनके वजन से लकड़ियां घूम जातीं और तोते लटक जाते। फिर वे बेचारे लकड़ियों को इतने जोर से पकड़ लेते कि कहीं गिर न जाएं। गिरने के भय के करण वे उन लकड़ी को पकड़ लेते थे और उनको छोड़ने की सामर्थ्य और साहस नहीं कर पाते थे। इन लकड़ियों को छोड़ने से वे गिरने वाले नहीं थे। क्या वे भूल गए थे कि वे आकाश में उड़ने वाले पक्षी हैं? जिनके पास आकाश में उड़ने वाले पंख हों उन्हें जमीन पर गिरने का भय नहीं होना था। लेकिन इन पागल तोतों को समझाए कौन? आदमी ही नहीं सुनता है तो तोते क्या सुनेंगे। वे अपने ही हाथों उन लकड़ियों में बंध जाते थे जिनसे कि वे बिल्कुल भी बंधे हुए नहीं थे और बहेलिया उन्हें पकड़ लेता था। मैं यह देख कर चुपचाप खड़ा रह गया था तो बहेलिया हंसा था और पूछने लगा थाः "कहिए मैं उन्हें पकड़ता हूं या कि वे स्वयं ही मेरी पकड़ में आ जाते हैं?
मैं क्या कहता तोते अपने ही हाथ से फंसे थे। असल में जो स्वयं ही फंसने को राजी नहीं है, उसे कोई फांस भी कैसे सकता है। मैं स्वयं के सहयोग के बिना परतंत्र बनाया ही कैसे जा सकता हूं? परतंत्रता सदा ही मेरी स्वीकृति है। अर्थात मेरे अतिरिक्त मुझे और कोई परतंत्र नहीं बनाता है। फिर यह परतंत्रता दुख लाती है, पीड़ा लाती है और प्राण स्वतंत्रता के लिए

आतुर हो उठते हैं। और इस भांति जीवन एक बेबूझ पहेली बन जाता है। स्वतंत्रता की खोज जीवन को और उलझाती है असली सवाल स्वतंत्रता की खोज का नहीं। असली सवाल परतंत्रता के पूर्ण दर्शन का है। क्योंकि उसे जानना ही उससे मुक्ति बन जाती है। और जो परतंत्रता की असलियत में उतरे बिना ही स्वतंत्रता की खोज में लग जाते हैं, उनकी यह खोज और नई परतंत्रताओं की जन्मदात्री बन जाती है। मोक्ष की खोज में लगे तथाकथित संन्यासियों के बंदी जीवन को देखकर यह भलीभांति समझा जा सकता है। स्वतंत्रता पाना नहीं है। वह कोई विधायक, पोसिटिव लक्ष्य नहीं है। केवल परतंत्रता जाननी और खोनी है। उसे खोते ही जो दोष रह जाता हैव वही स्वभाव है, वही स्वतंत्रता है। इसलिए स्वतंत्रता की साधना नकारात्मक, निगेटिव है।
स्वतंत्रता आनंद है। स्वतंत्रता आलोक है। लेकिन फिर क्यों हम परतंत्र होने को राजी हो जाते हैं? यही पूछना है। यही खोजना है। निश्चय ही कुछ कारण हैं जिनके कारण हम गुलामी में बंधते हैं और फिर धीर धीरे गुलामी हमारी आदत हो जाती है फिर हम इस गुलामी से पीड़ा भी पाते हैं, लेकिन हम गुलामी को छोड़ते भी नहीं हैं। शायद हमें इन दोनों का संबंध ही दिखायी नहीं पड़ता है। बल्कि पीड़ा से मुक्ति के उपाय और भी गुलामी को बढ़ाते चले जाते हैं।
मैं उन तोतों पर उस दोपहर सोचता था कि कितने नासमझ हैं। लेकिन आज मैं अपनी भूल को स्वीकार करता हूं। उस समय तक मनुष्य के मन को मैं ठीक से नहीं समझ पाया था। और अब, जब कि मैंने मनुष्य के मन को ठीक से जाना है तो समझ पाया हूं कि तोते जो नासमझी करते हैं वे नासमझियां तो मनुष्य भी करते हैं, इसलिए तोतों पर हंसने का कोई कारण नहीं है।
क्या आपने कभी मछुओं को मछलियां पकड़ते हुए देखा है? जिस जाल में मछलियां को खींच कर वे किनारे पर रखते हैं अगर उस जाल में कभी उन मछलियों को देखें तो बहुत सी मछलियां जाल के धागों को अपने मुंह में पकड़े हुए दिखायी पड़ेंगी। कोई उन पागल मछलियों से पूछे कि पागलो! जाल की रस्सियों को क्यों पकड़ रखा है? तो शायद उसे पता चले कि मछलियां जैसे ही जाल में पड़ती हैं, वे अपने बचाव के लिए उन जाल के को को जोर से पकड़ लेती हैं ताकि वे धागे के सहारे अपने रक्षा कर सकें। लेकिन वे जिन धागों को पकड़ती हैं वे धागे उसी जाल के होते हैं जो उन्हें ऊपर खींच लेता है और बांध लेता है, और जो उनकी मृत्यु बन जाता है। हम सार लोग भी उन धागों को पकड़े हुए हैं। शायद इस सुरक्षा के लिए कि हम बच जाएं। लेकिन जो भूल मछलियां करती हैं वही भूल हमसे भी हो जाती हैं। हम उन्हीं धागों को पकड़े हुए हैं जो कि जाल के हैं और उनको पकड़े होने के कारण जाल से छूटने में असमर्थ हो जाते हैं। लेकिन मछलियों के जाल हमें दिखाई पड़ते हैं और तोतों के जाल दिखाई पड़ते हैं, किन्तु आदमियों के मन का जाल और भी सूक्ष्म है। वह दिखाई नहीं पड़ता है। और जब तक हम उस जाल को ठीक से न देख लें तब तक हम उस संबंध में कुछ भी नहीं कह सकते हैं। और उसे ठीक से देखने में सबसे बड़ी बाधा कौन-सी है। सबसे बड़ी बाधा यही है कि हम उसे जाल ही नहीं समझ रहे हैं। हम उसे ही अपनी सुरक्षा और स्वतंत्रता समझ रहे हैं, इसलिए कठिनाई बहुत बड़ी हो गयी है।
कौन-सा जाल हमारे चित्त को बांधे हुए है और हम किन कारणों से परतंत्र
हैं- इन बातों को ही आज की संध्या मैं आपसे चर्चा करना चाहता हूं।
इस संबंध में सबसे पहली बात जो एक जटिल जाल की तरह मनुष्य को घेर लेती
है और जिसका हमें कभी ख्याल भी पैदा नहीं होता है, और जिसके संबंध में हम कभी विचार भी नहीं करते हैं, बल्कि जिसके संबंध में यदि कोई हमें चेताए तो शायद हम नाराज ही होंगे। वह है मनुष्य की यांत्रिकता। यह एक अत्यंत सीधा और सरल और स्पष्ट तथ्य है। लेकिन हम इसे एकदम से देखने और मानने को राजी नहीं हैं। क्योंकि वह हमारे सारेअहंकार को धूल धूसरित कर देता है। मनुष्य एक यंत्र है। एक मशीन है। हम यंत्र की भांति जीते हैं- मशीनों की भांति। लेकिन हमें यह भ्रम है कि हम मनुष्य हैं और हम स्वतंत्र हैं। साधारणतः मनुष्य एक यंत्र की भांति जीता है, लेकिन वह सोचता है कि मैं यंत्र नहीं हूं। मैं आत्मा हूं। साधारणतः वह सोचता है कि मैं जो कर रहा हूं, वह मैं कर रहा हूं। लेकिन सचाई तो यह है कि हमसे कर्म होते हैं, हम उन्हें करते नहीं

हैं। यदि हम कर्मों को करने में स्वतंत्र नहीं हैं। हम करीब करीब उसी तरह यंत्र चालित हैं जैसे कोई बटन को दबा दे और बिजली जल जाए या कोई मोटर को चला दे और मोटर चल पड़े। हमारा जीवन भी बाहर से अनुप्रेरित है। बाहर की घटनाएं घटती हैं और हमारा जीवन भी उसके अनुसार ही उनकी प्रतिक्रियाओं, रिएक्सन्स में संचालित हो जाता है।
एक आदमी आपका अपमान करता है और आप क्रोध से जल उठते हैं। क्या ये जल उठना बिल्कुल यांत्रिक ही नहीं है। लेकिन कहेंगे आप यही कि मैंने क्रोध किया। आपने क्रोध किया या स्वास्तिकक्रोध आपको हुआ? क्या कभी आपने सोचा है कि क्रोध करने वाले आप हैं या क्रोध उसी तरह यंत्र की भांति पैदा होता है जैसे बटने दबाने से बिजली जल जाती है? धक्का देने पर क्रोध का पैदा होना बिल्कुल यांत्रिक, मेकेनिकल है उसमें आपने कुछ किया नहीं। यह कहना भूल है कि मैंने क्रोध किया। यही कहना उचित है कि मुझमें क्रोध जागा। करने का भ्रम बहुत खतरनाक है। आप कहते हैं कि मुझे फलां व्यक्ति पर प्रेम है, लेकिन शायद ही कभी आपने सोचा होगा कि प्रेम आप कर रहे हैं या कि प्रेम हो
गया? आप प्रेम के करने वाले हैं या कि मशीन की भांति संचालित हो गए हैं और
आपके द्वारा प्रेम होता है।
बुद्ध एक गांव के पास से निकलते थे। कुछ लोगों ने उन पर पत्थर फेंके
और उन्हें गालियां दी और अपमानित किया। बुद्ध ने उन मित्रों से कहाः मुझे
दूसरे गांव जल्दी जाना है, अगर तुम्हारी बात पूरी हो गई तो मैं जाऊं? या तुम्हारे पत्थर तुम्हें और फेंकने को बाकी हों तो थोड़ा और रुकूं लेकिन ज्यादा देर रुक सकूंगा। दूसरेेगांव मुझे जल्दी पहुंचना है। उन लोगों ने कहाः "क्या
आप इसे बातचीत कहते हैं? हमने तो स्पष्ट ही अपमान किया है और गालियां दी
हैं। और पत्थर फेंके हैं। लेकिन क्या आपको यह दिखायी नहीं पड़ता है कि ये गालियां हैं, यह अपमान है? आपकी आंखों में कोई क्रोध भी दिखाई नहीं पड़ रहा
है। बुद्ध ने कहाः अगर दस वर्ष पहले तुम आए होते तो तुम मुझे क्रोधित करने
में समर्थ हो जाते, क्योंकि तब मैं अपना मालिक नहीं था। तब मेरे भीतर सारी क्रियाएं यांत्रिक थीं। मेरा कोई आदर करता तो मैं प्रसन्न होता और मुझे कोई गालियां देता तो मैं अपमानित होता। ये सारी क्रियाएं बिल्कुल यंत्र की भांति होतीं, मैं इनका उस वक्त मालिक नहीं था। लेकिन तुम थोड़ी देर करके आए हो। अब मैं अपना मालिक हो गया हूं। अब कुछ भी मेरे भीतर यांत्रिक नहीं है। जो मैं नहीं करना चाहता हूं, वह अब नहीं होता। वही होता है, जो मैं करना चाहता हूं।
जो मैं नहीं करना चाहता वह भी यदि मेरे भीतर होता हो तो उसे कर्म नहीं
कह जा सकता। वह एक्शन नहीं, रिएक्शन है, प्रतिकर्म है, प्रतिक्रिया है। हमारे जीवन में सब प्रतिक्रियाएं हैं। और जिसके जीवन में सब प्रतिक्रियाएं हैं, कोई कर्म नहीं हैं, उसके जीवन में कोई स्वतंत्रता संभवना नहीं हो सकती। वह एक मशीन की भांति है, वह अभी मनुष्य नहीं है। क्या आपको कोई स्मरण आता है कि आपने कभी कोई कर्म किया हो? एक्शन किया हो, जो आपके भीतर से जन्मा हो जो बाहर की किसी घटना की प्रतिक्रिया या प्रतिध्वनि न हो? शायद ही आपका ऐसी घटना याद आए जिसके आप करने वाले मालिक हों। और अगर आपके भीतर आपके जीवन में ऐसी घटना नहीं है जिसके आप मालिक हैं तो इससे बड़े आश्चर्य की बात और क्या हो सकती है? क्या ऐसी स्थिति में स्वयं को अपना मालिक समझना शेखचिल्लीपन ही नहीं है? हम यही समझते रहते हैं कि हम कुछ कुछ कर रहे हैं और हम अपने कर्मों को करने में स्वतंत्र हैं। जब कि हमारा जीवन एक यंत्रवत, एक मशीन की तरह चलता है। हमारा प्रेम, हमारी घृणा और क्रोध, हमारी मित्रता, हमारी शत्रुता, सब यांत्रिक हैं, मैकेनिकल हैं। उसमें कहीं कोई चेतना, कांसियसनेस कहीं किसी स्वबोध का कोई अस्तित्व नहीं है। लेकिन हम इन सारे यांत्रिक कर्मों को करके सोचते हैं कि हम कर्ता हैं। मैं कुछ कर रहा हूं। और यह कहने का भ्रम हमारी सबसे बड़ी परतंत्रता बन जाती है। यही वह खूंटी बन जाती है जिसके द्वारा हम जीवन में कभी स्वतंत्र होने में समर्थ नहीं हो पाते और यही वह रस्सी बन जाती है जिसके द्वारा कभी हम अपने मालिक नहीं हो पाते। शायद आप सोचते हों कि जो आप सोचते हैं वह आप सोच रहे हैं तो भी आप गलती में हैं। एकाध विचार को स्वयं में चित्त से अलग

करने की कोशिश करें, तो आपको पता चल जाएगा कि आप विचारों के भी मालिक नहीं हैं। वे भी आ रहे हैं और जा रहे हैं जैसे समुद्र में लहरें उठ रही हैं और गिर रही हैं। जैसे आकाश में बादल घिर रहे हैं और मिट रहे हैं। जैसे वृक्षों मैं पत्ते लग रहे हैं और झड़ रहे हैं। वैसे ही विचार भी आ रहे हैं और जा रहे हैं, आप उनके भी मालिक नहीं हैं। इसलिए विचारक होने का केवल भ्रम है आपको, किन्तु आप विचारक हैं नहीं।
विचारक तो आप तभी हो सकते हैं, जब आप अपने विचारों के मालिक हों। लेकिन एक विचार को भी अलग करने की कोशिश करें और आपको पता चलेगा कि वह अलग होने से इनकार कर देगा और तब आपको अपनी असमर्थता और कमजोरी का बोध होगा। और तब शायद आप समझेंगे जैसे सांझ पक्षी अपने वृक्ष पर आकर डेरा ले लेते हैं, ऐसे चारों तरफ उड़ते हुए पक्षी अपने वृक्ष पर आकर डेरा ले लेते हैं, ऐसे चारों तरफ उड़ते हुए विचार भी आपके मन पर बसेरा कर लेते हैं। लेकिन आप उनके मालिक नहीं हैं।
और क्या कभी आपको ख्याल आया कि एकाध विचार आपके भीतर भी पैदा हुआ है? कोई एकाध विचार आपका भी है या कि सब विचार दूसरों के हैं और उधार हैं। अगर आपके भीतर कभी भी एक विचार का जन्म न हुआ हो जिसको आप कह सकें कि यह मेरा है तो आप निश्चित जान लें कि ये विचार जो आपके मालूम होते हैं, आपके नहीं हैं। वे सब उधार हैं, और बाहर के हैं।
न तो कर्म हमारे हैं, वे यांत्रिक हैं और न विचार हमारे हैं, वे संगृहीत हैं। और इन्हीं कर्म और विचारों के कारण हम अपने को कर्ता और विचारक समझ लेते हैं। और जो ऐसा समझ लेता है वह यहीं रुक जाता है, उसकी आगे की यात्रा बंद हो जाती है। ये दो बातें पहले सूत्र में जान लेनी जरूरी हैं कि कर्म और विचार हमारी मालकियत नहीं है। वे यांत्रिक हैं।
एक रात किसी होटल में एक नया मेहमान आकर ठहरा। ठहरते समय होटल के मालिक ने उससे कहा, मित्र, कहीं और ठहर जाएं तो अच्छा है। होटल में केवल एक ही कमरा खाली है, वह हम आपको दे सकते हैं। लेकिन उसके ठीक नीचे जो मेहमान ठहरा है, उसके कारण वह कमरा हम किसी को भी देने में असमर्थ हैं। क्योंकि आप जो थोड़े हिल डुले भी, थोड़ आवाज भी आपसे हो गई तो उस व्यक्ति से आपका झगड़ा हो जाने की संभावना है। पहले भी जो लोग उस कमरे में ठहरे थे उनका नीचे के मेहमान से झगड़ा हो गया और इसलिए जब तक नीचे का मेहमान ठहरा हुआ है, हमने तय किया है कि ऊपर का कमरा खाली ही रखेंगे। उस नए अतिथि ने कहाः "आप चिंता न करें। कोई संभावना नहीं है कि मेरा झगड़ा हो जाए। दिन भर में काम मैं व्यस्त रहूंगा और रात लौटूंगा, दो-चार घंटे सोकर सुबह ही अपनी यात्रा पर आगे निकल जाऊंगा। इसलिए कमरा दे दें, झगड़े की कोई चिंता न करें।
कमरा दे दिया गया। वह मेहमान दिन भर गांव में काम करके रात लौटा। कोई बारह बज गए होंगे, वह थका-मांदा आया। उसे नीचे के मेहमान का कोई ख्याल भी न रहा। वह आकर बिस्तर पर बैठा। उसने एक जूता खोल कर नीचे पटका। जूते की आवाज से उस से उसे ख्याल आया कि नीचे के व्यक्ति की नींद न टूट जाए, इसलिए उसने दूसरा जूता आहिस्ता से खोल कर चुपचाप रख दिया और सो गया।
कोई दो घंटे बाद नीचे के महानुभाव ने आकर उसका दरवाजा खटखटाया। वह नींद में से उठा। परेशान था कि सोते हुए मुझसे क्या भूल हो गई? उसने दरवाजा खोला। नीचे के मेहमान ने कहाः महाशय, आपका एक जूता गिरा तो मैंने समझा कि आप आ गए हैं। लेकिन दूसरे जूते का क्या हुआ? उसने मेरी नींद समझा कि आप आ गए हैं। लेकिन दूसरे जूते का क्या हुआ? उसने मेरी नींद खराब कर दी। मैंने इस विचार को निकालने की बहुत कोशिश की मुझे क्या मतलब है कि किसी दूसरे के जूते का क्या हुआ? कुछ भी हुआ हो, लेकिन जितना ही मैं इस विचार को निकालने की कोशिश करने लगा, उतना मैं मुसीबत में पड़ गया। सारी नींद धीरे- धीरे उड़ गई और मुझे आपका दूसरा जूता हवा में लटका हुआ दिखाई पड़ने लगा, क्योंकि वह गिरा नहीं। मैंने उसे जूते को हटाने की बहुत कोशिश की अपने मन से, लेकिन मैं अपनी आंख बंद करता तो आपका जूता लटका हुआ दिखाई पड़ता और मन में ख्याल आता कि दूसरे जूते का क्या हुआ? आखिर कोई रास्ता न देख कर मैं आया हूं आपने पूछने! मुझे क्षमा करें, क्योंकि आपकी नींद मैंने तोड़ी है। लेकिन इसके सिवाय और कोई रास्ता न था। अब दूसरे जूते के संबंध में मेरी

जिज्ञासा समाप्त हो जाए तो जाकर मैं लेटूं और निश्चिंतता से सो सकूं। आज ही मैं इस सत्य को जान सका हूं कि एक व्यर्थ के विचार को भी चित्त से हटाना कितना कठिन है?
आप भी ऐसे बहुत से विचारों से परिचित होंगे जिनका हटाना संभव नहीं हुआ होगा। जिनको हटाने में आप समर्थ नहीं हो सके होंगे। तो क्या कारण है कि उन विचारों के मालिक होने का भ्रम हम अपने भीतर पैदा न करें? कौन सी वजह है कि मैं समझूं कि ये विचार मेरे हैं? यदि मैं विचारों का मलिक हूं तो चाहूं तब विचार बंद हो जाने चाहिए और जब चाहूं तब जन्मने चाहिए। और यदि मैं न चाहूं कि विचार चलें तो मेरा मन शांत और पूर्ण मौन हो जाना चाहिए। लेकिन क्या ऐसा होता है?
कोशिश करके देखें कि एक क्षण को भी मौन होना संभव है? एक क्षण भी विचारों की धारा को तोड़ना आसान नहीं है। एक विचार को भी बाहर फेंक देना आसान नहीं है। सचाई तो यह है कि जिस विचार को भी आप बाहर फेंकना चाहेंगे, उसी विचार से आपकी शत्रुता खड़ी हो जाएगी। और आप पाएंगे कि व विचार बलपूर्वक आपके भीतर प्रवेश कर रहा है। और आप पाएंगे कि आप हार गए हैं और वह विचार जीत गया है। जिन विचारों को हम हटाना चाहते हैं, वे लौट कर आ जाते हैं और इस बात की घोषणा करते हैं कि आप मालिक नहीं हो। लेकिन जिंदगी भर इस बात को सुनने पर भी हमको यह भ्रम बना रहता है कि हम विचारों के मालिक हैं। एक व्यक्ति था नसरुद्दीन। वह एक सांझ अपने घर से बाहर निकल रहा था और तभी उसने देखा कि जमाल नामक एक दूसरे गांव का उसका मित्र द्वार पर आकर खड़ा था। नसरुद्दीन ने कहा, मित्र बहुत दिनों के बाद तुम आए हो, तुम ठहरो घर पर, मैं कुछ मित्रों से जरूरी मिलने जा रहा हूं। उनसे मिलकर तीन घंटे बाद में वापिस लौटूंगा, तब तुमसे मिल सकूंगा। या तुम्हारी मर्जी हो तो तुम भी मेरे साथ चले चलो तो मित्रों से तुम्हारा भी मिलना हो जाएगा और रास्ते में तुमसे बातचीत भी हो सकेगी। जमाल ने कहा, "मेरे कपड़े धूल भरे हो गए हैं फिर रास्ते भर पसीने से डूब गया हूं। इन कपड़ों को पहनकर किसी के घर जाना उचित न होगा। अगर तुम दूसरे कपड़े दे सको तो मैं उन्हें पहन लूं और तुम्हारे साथ चलूं। नसरुद्दीन ने अपने पास जो सबसे अच्छा कोट था, अच्छे कपड़े थे वे मित्र को पहना दिए और उनको पहनाकर अपने गांव में जहां मिलने जाना था, वहां गया।
वह पहले घर पहुंचा। वहां जाकर उस भवन के मालिक से उसने कहाः यह हैं मेरे मित्र। मैं आपको इनका परिचय करा दूं। इनका नाम है जमाल, मेरे बहुत पुराने और घनिष्ठ मित्र हैं। और ये कोट और कपड़े पहने हुए हैं, ये मेरे हैं। जमाल को बहुत परेशानी हुई होगी। बाहर निकलकर उसने कहाः तुम आदमी कैसे हो? इस बात को कहने की क्या जरूरत थी कि कपड़े किसके हैं? इतना ही काफी था कि तुम मेरे बावत बता देते। मेरे कपड़ा के संबंध में बताने की तो कोई जरूरत भी न थी। अब दूसरे घर में ख्याल रखना, मेरे कपड़ों के बावत कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं है। नसरुद्दीन दूसरे मकान में पहुंचा। उसने जाकर कहाः ये हैं मेरे मित्र जमाल, इनसे मिलिए। रही कपड़ों की बात, सो कपड़े उनके ही हैं, मेरे नहीं।
जमाल तो बहुत परेशान हो गया। बाहर निकलकर उसने कहाः तुम पागल तो नहीं हो? इस बात को बताने की जरूरत क्या थी कि कपड़े मेरे हैं! नसरुद्दीन ने कहा, मैंने तो बहुत रोकने की कोशिश की, लेकिन यह विचार एकदम से मेरे भीतर घूमने लगा कि मैंने पहली बात जो गलती कर दी है यह कहकर कि कपड़े मेरे हैं, तो भूल सुधारकर कह दूं कि ये कपड़े इन्हीं के हैं। जमाल ने कहा कि देखो, अब अगले घर में इसकी कोई चर्चा उठाने की जरूरत है नहीं। बिल्कुल भी कोई बात उठाना उचित नहीं है। न तुम्हारे, न मेरे। इनकी बात को ही मत उठाना।
वे तीसरे घर में गए। नसरुद्दीन ने कहाः "ये हैं मेरे पुराने मित्र जमाल, रही कपड़ों की बात सो उसका उठाना बिल्कुल ही उचित नहीं है कि किसके हैं?" बाहर निकलकर जमाल ने कहा, अब मुझे तुमसे कुछ भी नहीं कहना है, लेकिन तुम आदमी कैसे हो! कपड़ों की बात क्यों उठाई? उसने कहाः मैंने तो बहुत अपने आपको रोका, लेकिन कठिनाई यह हो गई कि यह रोकने की कोशिश से ही सारी मुसीबत हो गई। रोकते-रोकते यह बात मेरे मुंह से निकल गई कि कपड़ों की बात करना उचित

नहीं है चाहे किसी के भी हों, और इसका एक ही कारण दिखाई पड़ता है और वह यह कि मैं इस बात को रोकने की कोशिश कर रहा था।
जिस विचार को आप रोकने की कोशिश करेंगे, आप पाएंगे कि वह बड़ी ताकत से उठना शुरू हो गया है। देखें और करें, और पता चल जाएगा। जिन विचारों को हम निषेध करते हैं, वे विचार बड़ा आकर्षण ले लेते हैं और उसमें बड़े प्राण आ जाते हैं और वे बड़े बलपूर्वक हमारे भीतर उठने शुरू हो जाते हैं। लेकिन एक बात इस घटना से हमें ख्याल में आनी चाहिए, वह यह है कि हम विचारों के मालिक नहीं हैं। लेकिन यही बात हमारे ख्याल में नहीं आती है। अगर हम उनके मालिक होते तो कहते रुक जाओ, तो विचार रुक जाते और हम कहते चलो, तो विचार चलने लगते। लेकिन हम सभी को यह ख्याल है कि मैं विचारक हूं। मैं सोचता हूं। हममें से कोई भी सोचता नहीं है। क्योंकि जो सोचेगा, उसके जीवन में एक क्रांति घटित हो जाती है। जो सोचेगा उसका जीवन बदल जाएगा। जो विचार करने में समर्थ होगा वह स्वतंत्र हो जाएगा क्योंकि स्वतंत्रता और विचार करने की सामर्थ्य एक ही चीज के दो नाम हैं। यह भ्रम छोड़ दें कि आप विचार करते हैं। क्योंकि विचार अगर आप करते हों तो आपके जीवन में दुख और चिंता और तनाव खोजने से भी नहीं मिल सकते थे।
कौन चाहता है कि वह दुखी हो, लेकिन वे विचार जो दुख देते हैं उन पर हमारी कोई मालकियत नहीं है। इसलिए हम उन्हें दूर करने में समर्थ नहीं हो पाते, कौन चाहता है कि व चिंतित हो, लेकिन चिंताएं हमें घेर लेती हैं और हम उन्हें दूर करने में असमर्थ हैं। कौन चाहता है कि वह तनाव से भरा रहे, अशांत रहे, पीड़ित रहे? कोई भी नहीं चाहता है। अगर हम मालिक होते इन विचारों के तो हम इन सारी बातों को कभी का विदा कर देते। परंतु हम मालिक नहीं हैं। और भ्रम हमें यह है कि हम मालिक हैं। यह भ्रांति ही हमारे जीवन को नीचे जमीन से बांध रखती हैं और ऊपर उठने नहीं देती। यह भ्रांति बिल्कुल खोटी, बिल्कुल झूठी है। इसमें रत्ती भर भी सत्य नहीं है।
विचारक आप नहीं हैं और न ही आप कर्ता हैं। लेकिन हमें यह ख्याल होता
है कि मैं यह कर रहा हूं, वह कर रहा हूं। हमें न मालूम कितनी-कितनी बातों का भ्रम है। हमारी जिंदगी में जिन चीजों से हमारे करने का कोई भी संबंध नहीं है उनको भी हम करने का कहते हैं।
आप किसी को कहते हैं कि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं। क्या कभी कोई आदमी किसी को प्रेम कर सकता है? क्या यह आपके वश में है कि किसी को प्रेम करें? और आपको कह जाए कि फलां व्यक्ति को प्रेम करो तो आपको पता चलेगा कि आपके वश में नहीं है कि आप प्रेम कर सकें। आप मुश्किल में पड़ जाएंगे अगर आपको किसी के प्रेम करने का आदेश दे दिया जाए। आप अपनी सारी ताकत लगाकर हार जाएंगे। और अंत में आप पाएंगे कि जितनी आप कोशिश करते हैं प्रेम के करने की, उतना ही प्रेम दूर होता चला जाता है। आपको पता चलेगा, आपके हाथों में प्रेम बंध नहीं पाता है। आप प्रेम नहीं कर सकते हैं। वह आपका कर्म नहीं है। आप उसके कर्ता नहीं हैं। अगर आपसे कहा जाए किसी पर क्रोध करें, तो क्या आप कोशिश करके क्रोध कर सकते हैं? अगर आप कोशिश करके क्रोध नहीं कर सकते हैं तो फिर आपको यह भ्रम ही होगा कि मैं क्रोध करता हूं। अगर आपसे मैं कहूं कि यह व्यक्ति जो सामने खड़ा है उस पर क्रोध करिए तो आप सारी कोशिश करके, हाथ पैर पटककर हार जाएंगे। आंखों को कितना ही ब? ज्ञ इए, हाथ पैर कितने ही जोर से पटकिए, मुट्ठियां बांधिए, लेकिन आप भीतर पाएंगे क्रोध का कोई पता नहीं है। आप मालिक नहीं हैं- न क्रोध के, न प्रेम के, न घृणा के। सारी घटनाएं घटती हैं जैसे आकाश से पानी गिरता है और हवाएं बहती हैं उसी तरह। लेकिन हम इन सबके करने वाले बन जाते हैं। और कहने लगते हैं कि मैं कर्ता हूं। और जब हमें भ्रम हो जाता है कि हम इनके करने वाले हैं, तब एक मुसीबत खड़ी हो जाती है। क्योंकि झूठे भ्रम बंधन का कारण हो जाते हैं। और झूठे भ्रम बड़ी मुसीबत बन जाते हैं। क्योंकि उनके कारण जीवन का यथार्थ हमें दिखाई ही नहीं पड़ता है।
अगर आपको यह ख्याल पैदा हो जाए कि मैं क्रोध करता हूं तो थोड़े बहुत दिनों में आपको यह भी ख्याल पैदा होना शुरू हो जाएगा कि मैं चाहूं तो क्रोध पर विजय भी पा लूं। तो आप कोशिश में लग जाएंगे क्रोध को दबाने की,

क्रोध को मिटाने की, क्रोध को हटाने की। जब कि बुनियादी रूप से आपने कभी क्रोध किया ही नहीं था। आप कभी मालिक ही नहीं थे क्रोध को करने के तो आप क्रोध को हटाने के मालिक कैसे हो सकते हैं? अगर आप क्रोध करने वाले होते तो आप क्रोध को हटा भी सकते। अगर आप प्रेम करने वाले होते तो आप प्रेम को हटा भी देते। लेकिन न तो आप क्रोध करने वाले थे और न प्रेम करने वाले। यह भ्रम था, इसलिए इनको हटाने की बात भी व्यर्थ है। इनको आप हटा नहीं सकते। यह कहना साधारणतः अज्ञान है कि मैं कर रहा हूं। मनुष्य एक यंत्र है। उससे कुछ होता है, लेकिन वह करता नहीं है। अचेतन प्रकृति यांत्रिक रूप से कार्य करती है और हम व्यर्थ ही कर्त्ता बन जाते हैं। कर्ता बनना इतना आसान नहीं है।
एक लड़का जवान हो जाता है। और जवान होते ही उसके भीतर सेक्स का, काम का जन्म होता है। लेकिन सोचता तो वह यही है कि जिस लड़की को वह प्रेम कर रहा है, वह प्रेम कर रहा है। ख्याल उसको यही होता है कि यह मैं कर रहा हूं। लेकिन बड़ी अचेतन शक्तियां हमारे भीतर काम करती हैं। वे हमें धकेलती हैं। जिस दिशा में धक्का देती हैं, उधर हम चले जाते हैं। और हम सोचते हैं कि हम कर रहे हैं।
श्वास आती है और जाती है। लेकिन हम सोचते हैं कि मैं श्वास ले रहा हूं। अगर मैं श्वास ले रहा हूं तो मौत असंभव हो जाएगी। क्योंकि मैं श्वास लेता ही चला जाऊंगा और मौत सामने आकर खड़ी रहे लेकिन मैं श्वास लेना बंद नहीं करूंगा। उससे क्या होगा? मौत को लौटना ही पड़ेगा। लेकिन मौत आज तक नहीं लौटी। क्योंकि मौत जब आती है, तब हमें पता चलता है कि श्वास हम ले नहीं रहे थे, श्वास आ रही थी, जा रही थी और यह हमारा भ्रम था कि हम ले रहे हैं। लेकिन यह भ्रम तभी टूटता है जब श्वास का आना बंद हो जाता है। श्वास टूटने के साथ ही यह भ्रम टूटता है। जीवन भर हमें यही ख्याल रहता है कि मैं श्वास ले रहा हूं। यह खून जो आपकी नसों में बह रहा है, वह आप बहा रहे हैं? यह हृदय जो धड़क रहा है, आप धड़का रहे हैं? यह नाड़ी में जो गति है, आप कर रहे हैं? नहीं यह सब यंत्र की भांति हो रहा है जिस पर हमारी कोई मालकियत नहीं है। यह हमारी स्थिति है।
न तो विचार हमारे हैं, न जीवन, न श्वास, न कर्म। लेकिन हम सभी को यह भ्रम है कि ये हमारे हैं। और इस ख्याल से बंधकर बड़ी कठिनाई हो जाती है, क्योंकि यह ख्याल एकदम झूठा और मिथ्या है। लेकिन क्या मैं यह कहना चाहता हूं कि इसमें आपका कोई भी वश नहीं है? क्या मैं यह कहना चाहता हूं तब आप हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाएं और कुछ न करें? क्या मैं यह कहना चाहता हूं कि आप निराश हो जाएं। नहीं, बल्कि मैं यह कहना चाहता हूं कि यदि आपको सारी बातें दिखायी पड़नी शुरू हो जाए, अगर सारी स्थिति की समझ, अंडरस्टेंडिग पैदा हो जाए... इस बात का होश आप में पैदा हो जाए कि मनुष्य कैसा यांत्रिक है तो आपके भीतर उस किरण का जन्म हो जाएगा, जो विचार भी कर सकती है और कर्म भी कर सकती है। लेकिन इस बोध के द्वारा ही उस किरण का जन्म हो सकता है, जो आपको सचेतन जीवन दे सकती है। यांत्रिक जीवन से ऊपर उठा सकती है।
सबसे पहले इस यांत्रिक स्थिति के प्रति जागरूक होना होगा। इस यांत्रिक स्थिति को पूरी तरह समझ लेना होगा, पहचान लेना होगा। इसका पूरा निरीक्षण, ऑबसरवेशन जरूरी है। इसका पूरा परीक्षण आवश्यक है। हमारे जीवन में निरीक्षण बिल्कुल भी नहीं है। हम शायद कभी आंख खोलकर देखते ही नहीं हैं कि जीवन में क्या हो रहा है और यह जीवन क्या है? शायद हम पुरानी कथाओं को, पुरानी धारणाओं को और पुराने चलते हुए अंधविश्वासों को पकड़ लेते हैं और खुद के जीवन का कोई निरीक्षण नहीं करते हैं।
बचपन से हमें कह दिया जाता है कि देखो क्रोध मत करो। तो बच्चा शायद सोच लेता है कि मैं क्रोध कर रहा हूं, इसलिए मां-बाप कहते हैं कि क्रोध मत करो। ऐसे उसे क्रोध करने का भ्रम पैदा हो जाता है। बचपन में हमें सिखाया जाता है, अच्छे विचार करो, बुरे विचार मत करो। छोटे-छोटे बच्चों को यह ख्याल पैदा हो जाता है कि वे इन विचारों के मालिक हैं। अच्छा विचार करना या बुरा विचार करना मेरी ताकत, मेरे वश में है। और फिर इन्हीं बचपन में पाली हुई अंध धारणाओं को हम जीवन भर ढोते हैं। लेकिन मैं आपसे यह निवेदन

करूं कि साधारणतः जब तक मनुष्य की आत्मा सचेतन न हो, जब तक मनुष्य का बोध जागरुक न हो तब तक न तो कर्म उसके होते हैं और न विचार उसके होते हैं। जो आदमी सोया है, उस आदमी की कोई ताकत नहीं, सोए हुए आदमी का कोई वश नहीं है। उसकी कोई शक्ति नहीं है। बिल्कुल अशक्त, बिल्कुल नपुंसक। उसके भीतर कोई सत्व नहीं है। सोय हुआ आदमी जैसे अपने मनके सपने नहीं देख सकता है, जो भी सपने आते हैं वही उसे देखने पड़ते हैं। ऐसी स्थिति साधारणतः हम सबकी है। जागे हुए भी स्थिति है। सोते तो हम सोते ही हैं। जागे हुए भी सोते हैं। क्या कभी आपने सोचा है कि मैं आने मन के सपने देख सकता हूं। क्या कभी आपने यह कोशिश की कि अपने मन के सपने देखूं? क्या कभी आपने जो सपने देखने चाहे वही देखे? नहीं जो सपने आते हैं वही हमें देखने पड़ते हैं, क्योंकि सोया हुआ आदमी कुछ भी नहीं कर सकता है।
जैसे सोया हुआ आदमी सपने देखने में समर्थ नहीं है वैसे ही साधारणतः
हम भी जीवन में सोए हुए लोग हैं, जिनका निरीक्षण जागा हुआ नहीं है, जिनका बोध जागा हुआ नहीं है। हम भी जीवन में कुछ भी करने में समर्थ नहीं हैं। और यह सबसे बड़ी भ्रांति है कि हम सोचते हैं कि हम करने में समर्थ हैं। और इस भ्रांति के कारण हम सारे जीवन भर एक ऐसी दीवाल से सिर टकराते रहते हैं कि जिसका परिणाम सिवाय आत्मघात के और कुछ भी नहीं हो सकता है। क्या हमारा जीवन आत्मघात की लंबी और धीमी प्रक्रिया नहीं है?
इसलिए सबसे पहली और बुनियादी बात जाननी जरूरी है कि मनुष्य एक यंत्र है। जैसा मनुष्य है वह एक यंत्र है। और उसकी कोई सामर्थ्य नहीं है कि विचार करे या न करे। लेकिन यदि बोध हमारे भीतर पैदा हो जाए तो यह बोध ही हमें यंत्र के ऊपर उठने के लिए मार्ग बन जाता है। मनुष्य यंत्र है, लेकिन वह यंत्र ही होने को बाध्य नहीं है। चाहे तो वह एक सचेतन आत्मा भी हो सकता है। लेकिन इस होने की यात्रा में पहला कदम यह होगा कि वह अपनी यांत्रिकता को भलीभांति जान ले। आत्मज्ञान की ओर यह पहली सीढ़ी है।
क्या आपको कभी यह ध्यान आया है कि नींद में जब रात का सपना चलता है,
अगर आपको यह पता चल जाए कि यह सपना है तो इसका क्या मतलब होगा? इसका मतलब होगा कि नींद टूट गई है। अगर आपको यह पता चल जाए कि मैं जो देख रहा हूं वह सपना है, तो इसका मतलब यह होगा कि नींद टूट गई है। अगर आपको यह पता चल जाए कि जिस जिंदगी को मैं जी रहा हूं वह एक यांत्रिक जिंदगी है, तो आप समझ लेना कि आपकी जिंदगी में इस यांत्रिकता की समाप्ति का क्षण आ गया है। आपके भीतर एक नई किरण का जन्म हो गया है। नींद में पता नहीं चलता कि मैं सपना देख रहा हूं। यही पता चलता है कि जो देख रहा हूं वह सत्य है। यही नींद का सबूत है। और जिस क्षण यह पता चल जाए कि जो मैं देख रहा हूं वह सपना है, झूठा है, तब आप जान लेना कि आपके भीतर जागरण शुरू हो गया, आपने जागना शुरू कर दिया है। देखें! अपने जीवन को ध्यान से देखें। क्या वहां सब यंत्रवत प्रतीत नहीं होता है? क्या हमारा जीवन एक यांत्रिक गति नहीं है, जिसमें हम बाहर के धक्कों पर जीते हैं। जिसमें हम बाहर के द्वारा संचालित होते हैं। जिसमें बाहर से कोई हमारे धागे खींचता है और हमारे प्राण उसी भांति गति करने लगते हैं। लेकिन ऐसी जिंदगी है। स्वतंत्र जीवन तो वह है जो भीतर जीया जाता है, बाहर से नहीं।
एक फकीर था। वह एक गांव में ठहरा हुआ था। एक आदमी ने आकर उससे ऐसे अपशब्द कहे कि जो प्राणों में कांटों की भांति चुभ जाएं। जितनी तीखी गालियां हो सकती हैं उस भाषा में, उसने उसका उपयोग किया। उस फकीर ने बैठकर सारी बातें सुनीं। सुनने के बाद उसने कहा, मित्र, एक दफा सारी बातें फिर से दोहरा दो, हो सकता है कोई बात, मैं ठीक से न सुन पाया होऊं। उस व्यक्ति ने साश्चर्य कहाः "ये सारी बातें भी कोई फिर से दोहरा के सुने जाने की हैं? वह फकीर बोलाः बहुमूल्य बातें तुम लाए हो और उनको कहने में बड़ी मेहनत कर रहे हो। तुम्हारी आंखों में आग जल रही है, तुम्हारे हृदय में भी आग होगी और तुम बड़ा कष्ट उठा रहे हो और मैं उनको शांति से भी न सुन सकूं, यह तो बड़ी अशिष्टता होगी। लेकिन हो सकता है, तुम इतने क्रोध में हो और शायद इतनी जल्दी में कि मैं कुछ बातें न सुन पाया होऊं तो फिर तुम उन्हें एक दफा दोहरा दो, ताकि मैं उन्हें ठीक से सुन सकूं। रही उत्तर की बात, तो उत्तर

मैं तुम्हें कल दूंगा। चौबीस घंटे सोचने का मुझे मौका दो। और अगर मैं न आऊं तो तुम समझ लेना, तुमने जो बातें कहीं थीं वे सही थीं। अगर कोई बात गलत होगी तो मैं आकर तुम्हें निवेदन करूंगा। वैसे अभी तो मैं केवल धन्यवाद ही दे सकता हूं और अनुग्रह ही जता सकता हूं। मेरे लिए तुमने इतना श्रम उठाया है, उसके लिए मैं जितना भी स्वयं को ऋणी मानूं, उतना ही कम है।
लेकिन क्रोध की बातें के लिए कोई कभी एक क्षण के लिए रुककर सोचता है? कोई गाली देता है और हमारे भीतर आग लग जाती है। क्या उसके गाली देने में और हमारे भीतर आग में एक क्षण का भी अंतराल, इंटरवल होता है? नहीं, उसने वहां गाली दी और इधर हमारे भीतर आग शुरू हो गई वैसे ही जैसे कि किसी ने आग लगा दी और लकड़ी जलना शुरू हो जाए। क्या क्षण भर का भी मौका होता है सोच विचार का? नहीं होता और इसीलिए तो हमारा सारा जीवन यांत्रिक है। उसमें विचार का, जागरण का, होश का एक क्षण भी नहीं है। चीजें बाहर घटती हैं और हमारे भीतर काम शुरू हो जाता है।
लेकिन उस फकीर ने कहा कि मैं कल आकर उत्तर दूंगा। वह कल गया, लेकिन इस बीच चौबीस घंटे में वह आदमी बदल गया था, जिसने गालियां दी थीं। क्योंकि जिसने हमें गालियां दी हैं अगर हम गालियों का उत्तर न दें तो उस आदमी के क्रोध के जीने में और आगे जीते रहने में कठिनाई हो जाती है। हम उसके सहारे नहीं रह जाते। उसकी आग और आगे जले इसकी गुंजाइश नहीं रह जाती है।
वह फकीर जब दूसरे दिन उसके पास गया तब वह आदमी रोने लगा और उसने कहा मैंने बहुत गलत बातें कहीं। फकीर हंसने लगा और बोलाः तुम भूल में हो। मैंने खोजा तो पाया कि तुमने जो कहा, ठीक ही कहा। काश! मैं कल ही तुम्हें उत्तर देता तो भूल हो जाती। उस समय मैं चुप रह सका। और स्वयं को सोचने और देखने का समय दे सका तो सारी स्थिति ही बदल गई। आह! तुम जैसा मेरा मित्र और कौन है? अपनी कृपा आगे भी जारी रखना और जब भी मुझ में कोई भूल दिखाई पड़े तो चेता देना।
यह फकीर सोच रहा है। लेकिन हम? हम भी सोच रहे हैं क्या? हम जरा भी नहीं सोच रहे हैं और हमारा अंधापन ऐसा है कि हमें यह भी दिखाई नहीं पड़ता। इस अंधे क्रम में, इस अंधे रास्ते पर यह भी हो सकता है कि आपको गाली दूं, लेकिन आप मुझे उत्तर न दे सकें तो आप किसी और को उत्तर दें और आपको यह ख्याल भी न आए कि आप क्या कर रहे हैं।
एक आदमी अगर दफ्तर में काम करता है और उसका मालिक उसको गाली दे दे, अपमान कर दे तो चूंकि मालिक के क्रोध का उत्तर नहीं दिया जा सकता है, वह क्रोध को पी जाएगा। क्रोध तो उठ आएगा भीतर, क्योंकि क्रोध न मालिक को देखता है, न किसी को, क्रोध तो भीतर जलने लगेगा। लेकिन साहस, सुरक्षा और बहुत से ख्याल उसे भीतर दबा देंगे। वह क्रोध भीतर उबलता रहेगा। मालिक तो ताकतवर है और जैसे नदी ऊपर की तरफ नहीं चल सकती, नीचे की तरफ बहती है। वैसे ही क्रोध भी नीचे की तरफ बहेगा। वह घर जाएगा, कमजोर पत्नी मिल जाएगी घर पर, और कोई भी बहाना निकालेगा और कमजोर पत्नी पर टूट पड़ेगा। और उसे यह ख्याल भी न आएगा कि यह क्रोध अंधा है और पत्नी से इसका कोई संबंध नहीं है। वह पत्नी पर टूट पड़ेगा। वह पत्नी को मारे या गालियां दे या अपमान करे तो पत्नी पति से क्या कह सकती है? उसे तो हर तरह से सिखाया गया है कि पति है परमात्मा। इसलिए वह जो कहे सो सुन लेना और वह स्त्री उस क्रोध को पी लेगी। लेकिन क्रोध भीतर जग जाएगा, और जैसे नदी नीचे की तरफ बहती है, उसका बच्चा जब स्कूल से लौट आएगा तब कोई भी बहाना मिल जाएगा और बच्चे को पीटना शुरू कर देगी। कमजोर बच्चे पर पत्नी का क्रोध निकलना शुरू हो जाएगा। और बच्चा क्या कर सकता है? मां को तो कुछ कह नहीं सकता। हो सकता है वह अपनी गुड़िया की टांग तोड़ डाले या बस्ते को पटक दे या स्लेट फोड़ दे। ऐसा क्रोध अंधे की तरह बहता रहेगा। ऐसे हमारे सारे जीवन के विचार और भावनाएं और कर्म एक अंधे चक्कर में घूम रहे हैं। इसे सुनकर हमें हंसी आती है लेकिन आपने एक कहानी जरूर सुनी होगी और आप उस पर हंसे होंगे और आपको कभी ख्याल भी न आया होगा कि वह कहानी आपके बावत ही है।
एक सुबह एक राजा का दरबार भरा था। और एक आदमी आया। उसकी आंख से खून बह रहा था। उसकी एक आंख फूट गई थी। उस आदमी ने आकर राजा के दरबार में कहा कि

"महाराज! मुझे पर बड़ा अन्याय हो गया है। रात में मैं एक घर में चोरी करने घुसा। लेकिन अंधेरा होने की वजह से मैं भूल से दूसरे घर में चला गया। वह दूसरा घर जुलाहे का था। और जुलाहे ने अपने कपास साफ करने के यंत्र को खूंटी पर टांग रखा था। वह मेरी आंख में लग गया और मेरी आंख फूट गई। अब मैं मुश्किल में पड़ गया हूं। मैं चोरी कैसे करूंगा? जुलाहे ने मेरी आंख फोड़ दी है। आप जुलाहे को बुलाइए और उसे आंख फोड़ने के बदले में आंख फोड़े जाने की सजा दीजिए ताकि मुझ पर, गरीब पर अन्याय न हो। आपकी भी बदनामी न हो आपके राज्य में ऐसा अन्याय हो रहा है। राजा ने कहा कि फौरन जुलाहे को पकड़कर लाया जाए, यह तो बहुत बुरी बात है। यह बिचारा चोर क्या करेगा। उसकी एक आंख फूट गई है। एक तो काम इसका रात का और अब एक आंख फूट जाने से क्या होगा। फौरन उस जुलाहे को दो सिपाही पकड़कर ले आए। उस जुलाहे ने कहा मेरे मालिक! कसूर तो मुझसे हो गया कि मैंने खिड़की पर अपना यंत्र टांग दिया, लेकिन आप देखिए कि मुझे दोनों आंखों की जरूरत पड़ती है। कपड़ा बुनते वक्त मुझे दोनों तरफ दाएं बाएं देखना पड़ता है। अगर मेरी एक आंख फोड़ दी गयी तो फिर कपड़ा बुनना मुश्किल हो जाएगा। ज्यादा अच्छा हो कि मेरे पड़ोस में एक चमार रहता है और उसका काम ऐसा है जूता सीने का कि एक आंख से भी चल सकता है। दो आंख की उसे कोई खास जरूरत भी नहीं। उसको बुलवाकर उसकी एक आंख फोड़ दें तो न्याय भी पूरा हो जाएगा और मैं गरीब भी बच जाऊंगा। राजा ने कहा कि यह बात बिल्कुल ठीक है। न्याय तो पूरा होना ही चाहिए और इस भांति भी कि किसी को असुविधा न हो। नीति का यही तो नियम है कि सांप भी मरे और लाठी भी न टूटे। चमार को बुलवा लो और उसकी आंख फोड़ दो। चमार को बुलवा लिया गया और उसकी आंख फोड़ दी गई और न्याय संतुष्ट हो गया।
यह कहानी आपने सुनी होगी। नहीं सुनी होगी तो मैं आपसे कहता हूं। यह कहानी आपको एकदम मूर्ख्रता पूर्ण, बिल्कुल अर्थहीन मालूम होगी। क्या वह राजा पागल था? इस तरह कहीं न्याय होता है? लेकिन मैं आपसे कहता हूं कि वह राजा हम सबके भीतर बैठा है। और हम सब यही कर रहे हैं। रोज रोज यही कर रहे हैं।
जो क्रोध किसी पर उठता है वह किसी और पर निकल रहा है और न्याय पूरा हो रहा है। जो घृणा किसी पर पैदा होती है वह कहीं और बही जा रही है। और हमारी जिंदगी इसी पागल बादशाह की तरह न्याय से भरी है। और यह न्याय इसीलिए हुआ जा रहा है कि हम सोये हुए हैं और इसके प्रति जागे हुए नहीं कि क्या हो रहा है। ये विचार क्या कर रहे हैं, ये कर्म क्या कर रहे हैं? यह हमसे क्या हुआ जा रहा है? इसका हमें कोई बोध नहीं है, कोई होश नहीं है, कोई जागरूकता नहीं है।
यह जीवन की स्थिति है। यांत्रिकता जीवन की स्थिति है। और इस यांत्रिकता में चाहे कोई मंदिर जाता हो और चाहे कोई मस्जिद जाता हो, चाहे कोई कुरान पढ़ता हो या चाहे कोई गीता पढ़ता हो, कुछ भी न होगा। क्योंकि जो आदमी अभी अपने विचार और कर्म के ऊपर सचेत नहीं है, उसका गीता या कुरान का पढ़ना खतरनाक ही सिद्ध होगा। आज नहीं कल, वह गीता और कुरान के नाम से भी लड़ेगा और हत्या करेगा। उसका हिंदू होना खतरनाक है, उसका मुसलमान होना खतरनाक है। क्योंकि जो आदमी अंधा है उसका कुछ भी होना खतरनाक है। और वह जो भी करेगा उससे जीवन को दुख पहुंचेगा, पीड़ा पहुंचेगी, अशांति बढ़ेगी, युद्ध होगा, हिंसा होगी। यह जो सारी दुनिया में हो रहा है- यह हिंसा, युद्ध और परेशानी इसके लिए कोई राजनैतिक जिम्मेवार है ऐसा भी मत सोचना और ऐसा भी मत सोचना कि कम्युनिस्ट उसका जिम्मेवार है और ऐसा भी मत सोचना कि अमेरिका जिम्मेवार है। क्योंकि जब अमेरिका नहीं था, तब भी युद्ध था इस जमीन पर। और जब कम्युनिस्ट नहीं थे, तब भी युद्ध हो रहे थे।
पांच हजार साल में चौदह हजार छह सौ युद्ध हुए हैं। कौन यह युद्ध कर रहा है? यह सोया हुआ आदमी ही युद्ध की जड़ में है। यह जो भी करेगा उससे हिंसा पैदा होगी। युद्ध पैदा होगा। और यह सोया हुआ आदमी जो भी बनाएगा उससे विनाश होगा। इधर वर्षों की मेहनत के बाद हमने अणु-शक्ति की खोज की है। और इस खोज का परिणाम यह हुआ कि हम तैयारी कर रहे हैं कि किस भांति हम सारे मनुष्य को समाप्त कर दें। किस भांति हम सारी दुनिया को नष्ट कर दें। इसकी

तैयारी कर रहे हैं। हमने तैयार पूरी कर ली है और किसी दिन आज या कल किसी भी दिन सुबह उठकर आप पा सकते हैं कि दुनिया अपनी मौत के द्वार पर आ खड़ी हो गई है। और हम अपनी हत्या करने को राजी हो गए हैं। सोया हुआ आदमी और उसके हाथ में इतनी बड़ी ताकत! बेहोश आदमी, यांत्रिक आदमी और उसके हाथ में इतनी बड़ी ताकत। बड़़ी खतरनाक बात है। और ताकत कितनी है, शायद उसका आपको अनुमान भी न हो। इतनी बड़ी ताकत आज तक आदमी के हाथों में इस जमीन पर नहीं थी। यह ताकत होती तो शायद हम बहुत पहले ही दुनिया को खतम कर चुके होते। लेकिन अब हमारे पास ताकत आ गई है। हजारों अण और उदजन बम हमने तैयार करके संग्रहीत कर रखे हैं। ये इतने ज्यादा हैं कि मारने को आदमी भी नहीं है। हमारे पास आदमी हैं कुल साढ़े तीन अरब। साढ़े तीन अरब बहुत थोड़े लोग हैं। पच्चीस अरब आदमी मारे जा सकें इतने उदजन बम हमने तैयार कर लिए हैं। कई कारणों से ऐसा किसा है। हो सकता है कि एक दफा मारने से आदमी न मरे तो दुबारा मारना पड़े, तीसरी बार मारना पड़े। हमने सात- सात बार एक आदमी को मारने का इंतजाम कर लिया है, ताकि कोई भूलचूक न हो। जमीन बहुत छोटी है, इस तरह की सात जमीनें नष्ट कर सकें, इतना हमने इंतजाम कर रखा है।
शायद आपको ख्याल भी न हो कि मनुष्य ने यदि अपनी ही हत्या की योजना की होती तो भी ठीक था, उसका उसे हक था। आदमी अगर चाहे हम नहीं रहना चाहते तो उसे रोकने के लिए कोई भी क्या कर सकता है? उसकी अपनी मौज। लेकिन आदमी ने अपने साथ सारे कीड़े-मकौड़े पशु पक्षियों, पौधों सबके जीवन की समाप्ति का इंतजाम कर रखा है। आदमी के साथ सारा जीवन समाप्त होगा। वे छोटे कीटाणु भी समाप्त हो जाएंगे जिनकी उम्र लाखों वर्षों की हैं। जिनको मारना बहुत कठिन होता है, वे भी मर जाएंगे। क्योंकि आदमी ने जो ताकत इकट्ठी की है, उससे इतनी गरमी पैदा होगी कि किसी तरह का जीवन संभव नहीं रह जाएगा। एक उदजन बम के विस्फोट से कितनी गरमी पैदा होती है, आपको पता है? जमीन से सूरज कोई नौ करोड़ मील दूर है। लेकिन सूरज इतने दूर से हमको तपा देता है और परेशान करता है। और गरमी के दिनों में जरा-सा करीब सरक आता है और हमारी मुसीबत हो जाती है। उदजन बम से जितनी गरमी सूरज पर है उतनी ही हम जमीन पर पैदा करने में समर्थ हो गए हैं- उतनी ही गर्मी! नौ करोड़ मील दूर कसूर हमें परेशान करता है तो जब सूरज आपके पड़ोस में आ जाएगा तो क्या होगा? शायद फिर भी आपको ख्याल पैदा न हो कि गरमी कितनी है। एक सौ डिग्री हम गरम करते हैं तो पानी भाप बनकर उड़ने लगता सौ डिग्री कोई गरमी नहीं है। लेकिन उबलते हुए पानी में आपको डाल दिया जाए तो क्या होगा? अगर हम पंद्रह सौ डिग्री तक गरमी पैदा करें तो लोहा पिघलकर पानी हो जाएगा। लेकिन पंद्रह सौ डिग्री भी कोई गरमी नहीं है। अगर हम पच्चीस सौ डिग्री गर्मी पैदा करें तो लोहा तो भाप बनकर उड़ने लगता है। लेकिन पच्चीस सौ डिग्री भी कोई गर्मी नहीं है।
एक उदजन बम में विस्फोट से जो गर्मी पैदा होती है वह होती है दस करोड़ डिग्री। दस करोड़ डिग्री गर्मी कोई छोटी मोटी सीम में पैदा नहीं होती। चालीस हजार वर्ग मील में एक उदजन बम के विस्फोट से दस करोड़ गर्मी पैदा हो जाती है। उस गर्मी में किसी तरह के जीवन की कोई संभावना नहीं रहती किसने पैदा किया यह उदजन बम और किसलिए? यह पागल दौड़ किसलिए चल रही है? पिछले महायुद्ध में हमने पांच करोड़ लोगों की हत्या की है और अब इंतजाम किया है सबकी हत्या करने का। यह कौन कर रहा है? और आदमी कहता है हम विचारवान है! आदमी पर शक होता है कि कैसा विचारवान है? यह आदमी कर रहा है, और आदमी कहता है कि हम करने में समर्थ हैं! तो फिर युद्ध रोकने में समर्थ क्यों नहीं हो पाते? लेकिन हम जानते हैं हमारे बावजूद युद्ध करीब आ रहा है।
पहला महायुद्ध खतम हुआ तब सारे विचारशील लोगों ने कहा था कि अब हम कभी युद्ध न करेंगे। लेकिन पंद्रह साल भी नहीं बीते थे कि दूसरे युद्ध की हवाएं उठनी शुरू हो गई। दूसरा महायुद्ध हुआ। दोनों महायुद्धों में करोड़ों लोगों की हमने हत्या की दुनिया के सारे विचारशील लोगों ने कहाः अब हम कभी युद्ध न करेंगे। यह अब अंतिम युद्ध है। लेकिन दूसरा महायुद्ध खतम भी न हो पाया था कि तीसरे की तैयारियां शुरू कर दीं। यह आदमी विचारशील है? यह आदमी करने में समर्थ है? इसके अपने कर्मों पर भी इसका कोई वश नहीं, बिल्कुल नहीं, बिल्कुल नहीं। आदमी बिल्कुल यंत्र की भांति चला जा रहा है।

और आगे भी यदि यांत्रिकता की दौड़ ऐसी ही रही तो यह भी हो सकता, सारी दुनिया समाप्त हो जाए। हम मनुष्यों के साथ जीवन भी समाप्त हो सकता है।
लेकिन इसे रोका जा सकता है। इसे रोकने के लिए सिवाय इसके कोई उपाय नहीं है कि मनुष्य यांत्रिकता से मुक्त हो जाए। वह नींद से जागे। उपाय यह है कि मनुष्य अपनी यांत्रिक क्रियाओं से ज्यादा सचेत, ज्यादा बोधपूर्ण ज्यादा होश से भरा हो। वह ज्यादा बोध पूर्व जिए। अगर मनुष्य के भीतर बोध पैदा हो जाए तो जीवन के जो रोग हैं उनके ठहरने की कोई जगह नहीं रह जाएगी। मनुष्य की बेहोशी में रोगों को ठहरने का स्थान है। अगर आप होश से भर जाएं तो आप हिंदु न रह जाएंगे, न मुसलमान रह जाएंगे। अगर आप होश से भर जाएं तो आप हिंदुस्तानी रह जाएंगे, न पाकिस्तानी रह जाएंगे। अगर आप होश से भर जाएं तो काले गोरे के भेद की पकड़ नहीं रह जाएगी। अगर आप होश से भर जाएं तो जीवन में घृणा और क्रोध की जगह नहीं रह जाएगी। अगर आप होश से भर जाएं तो आपके जीवन में एक प्रेम का जन्म होगा। एक परमात्मा का स्मरण होगा। एक प्रकाश पैदा होगा। वह न केवल आपको बदलेगा वरन उसकी रोशनी आपके आसपास भी और घरों में अंधेरे को तोड़ने लगेगी। थोड़ से लोग भी अगर प्रकाश से भर जाएं और होश से भर जाएं तो जमीन के भाग्य में एक नया सूर्योदय हो सकता है।
ये थोड़ी सी बातें मैंने आपसे कहीं, ज्यादा बातें नहीं कहीं। मूलतः एक
ही बात कही कि मनुष्य यांत्रिक है और सोया हुआ है। और जो मनुष्य सोया हुआ है उसके जीवन में कोई आनंद नहीं हो सकता है। दुख ही होगा। दुख स्वाभाविक है। उसके जीवन में कोई शांति नहीं हो सकती। उसके जीवन में सत्य नहीं हो सकता है, स्वतंत्रता नहीं हो सकती है।
तो पहली खूंटी जो हम अपने बाबत बांधे हुए हैं वह यह है कि हम विचार करने में समर्थ हैं। जब कि झूठ है यह बात। और दूसरी खूंटी है कि हम कर्म करने में मालिक हैं। यह बात झूठी है। ये तो झूठी खूंटियां और रस्सियां हमारे जीवन को घेरे हुए हैं। इनको तोड़ देना जरूरी है।
ये कैसे टूटेंगी? ये निरीक्षण से और चित्त के प्रति जागरूक होने से टूट जाती हैं।
मनुष्य यंत्र है। लेकिन मनुष्य यंत्र भी नहीं है, यंत्र के ऊपर भी उठ
कर उनके भीतर कोई शक्ति है। मनुष्य जड़ है अभी, लेकिन उसके भीतर आत्मा सोयी हुई है, वह जाग सकती है। और मनुष्य में अभी कोई विचार नहीं है, लेकिन उसके भीतर विचार का जन्म हो सकता है। किस द्वार से और किस मार्ग से? वह हो सकता है स्वयं की समस्त क्रियाओं और विचारों के प्रति जागरूकता से। जो मैंने कहा उसे देखने की कोशिश करना। अपने कर्मों के बावत। अपने विचारों के बावत उसे सोचने की कोशिश करना। और देखने से यह सत्य अगर दिखाई पड़ जाए तो समझना आपके जीवन में क्रांति की शुरूआत हो गई है। आपका जीवन बदलने के किनारे आ गया है। इस पर थोड़ा विचार होश से भरने की कोशिश करना कि आपके कर्म, आपके विचार कहीं यंत्र की भांति तो नहीं हो रहे हैं? अगर ये यंत्र की भांति हो रहे हैं तो स्वयं को मनुष्य कहने का कोई अधिकार नहीं है। मनुष्य तो वही है जिसका मन जागा हुआ है। मनुष्य तो वही है जो सत्य जानने में समर्थ है। मनुष्य तो वही है जो स्वतंत्र है।